Postal Regn. - RTK/010/2020-22
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

नवम्बर 2023 (द्वितीय)

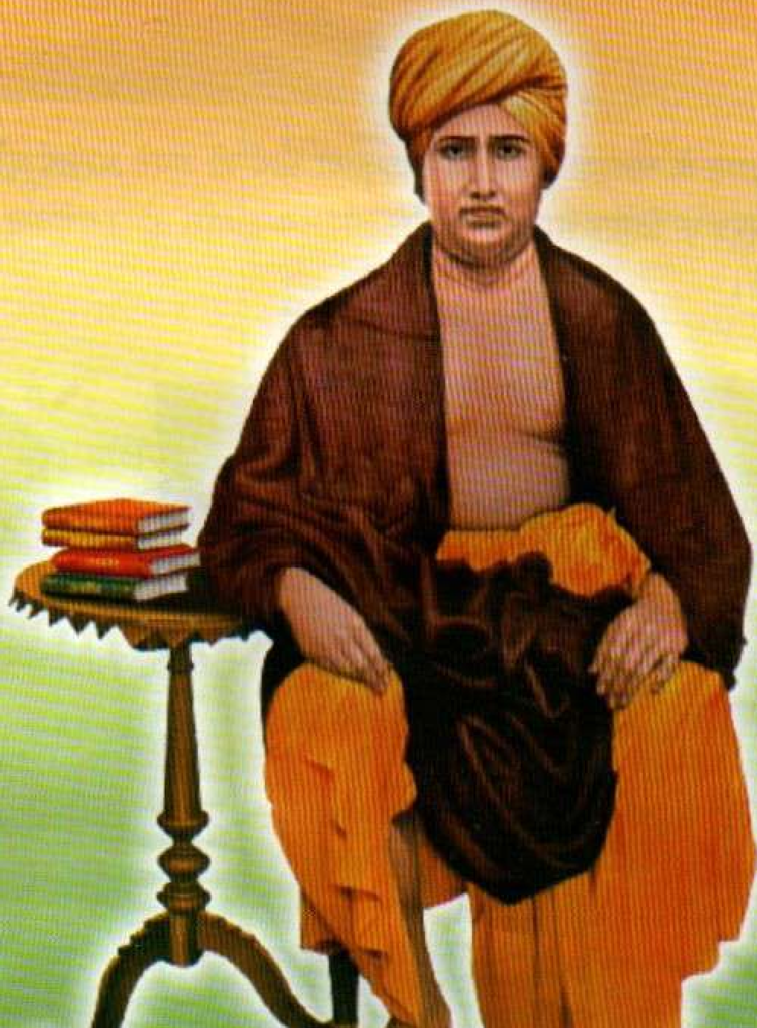

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

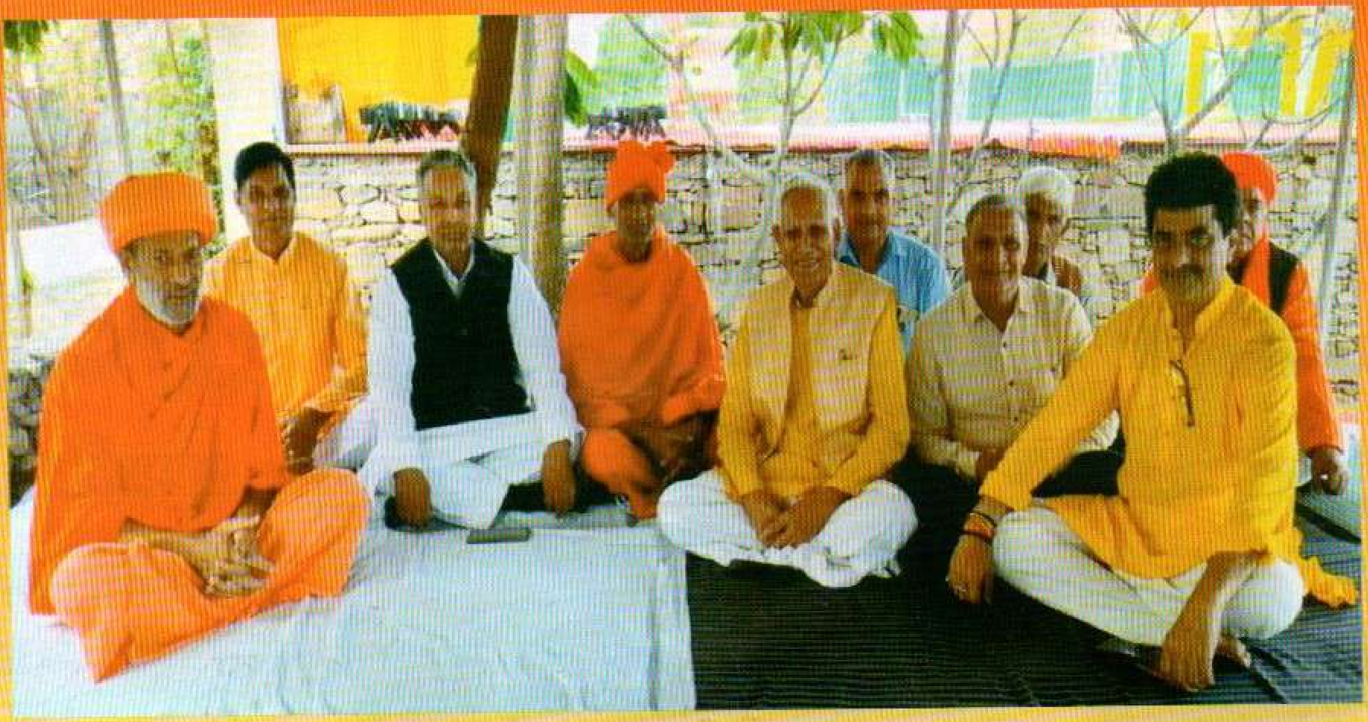

आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के यशस्वी प्रधान श्री राधाकृष्ण आर्य जी अपने 30 वर्ष पुराने आर्यवीर दल के दौरान के मित्र श्री सुरेंद्र कुमार के सुपुत्र के विवाह समारोह में पहुँचे और नव-दम्पत्ति को आशीर्वाद दिया एवं अपने पुराने मित्र के साथ पुरानी यादें ताजा कीं।

एनटीसी अस्पताल पानीपत के डॉक्टर अनिल आर्य और डॉक्टर ममता आर्या को आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी प्रधान श्री राधाकृष्ण आर्य ने दीपावली के शुभ अवसर पर महर्षि दयानन्द सरस्वती का चित्र भेंट कर शुभकामनाएं दीं।

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,124
विक्रम संवत् 2080
दयानन्दाब्द 200

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 19 अंक 20

सम्पादक :
उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क

देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये

विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक
आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म्॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

नवम्बर, 2023 (द्वितीय)
16 से 30 नवम्बर, 2023 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय-वेद-प्रवचन 2
2. विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी 3
3. स्वास्थ्य चर्चा-लहसुन के अनेक लाभ 4
4. महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश-वैचारिक सोच (साइंटिफिक टेंपर) तथा प्रखर बुद्धिवाद को अपनाएं 5
5. महर्षि दयानन्द के जीवन में अनेक बार आये मृत्युप्राप्ति के क्षण 6
6. आतंकवाद के भयानक रूप 9
7. भारत-भाग्य-विधाता-ऋषि दयानन्द 11
8. संकट विश्वास का 13
9. कविता-गऊओं को बचाओ-धर्म निभाओ 15
10. समाचार-प्रभाग व शेषभाग 16

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पंसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं। –सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन–उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

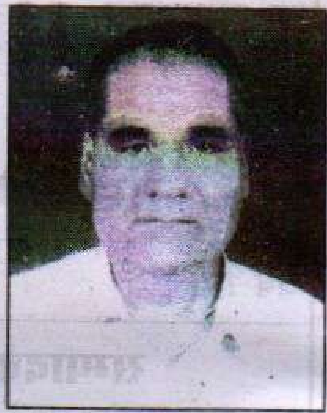

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधाना:।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहावि:॥
(ऋ० 10.71.1)

अन्वय–हे बृहस्पते! नामधेयम् दधाना: (मनुष्या:) यत् वाच: अग्रम् प्रथमम् प्रैरत। यत् एषाम् श्रेष्ठम् आसीत्। यत् एषाम् अरिप्रम् आसीत्। तत् एषाम् गुहायाम् निहितम् (आसीत्)। तत् ते प्रेणा (प्रेम्णा) आवि: (कृतवन्त:)।

अर्थ–हे विद्वन्! सृष्टि के आरम्भ में जब मनुष्यों में वस्तुओं के (नामधेयम् दधाना:) नाम रखते हुए (वाच: अग्रम्) वाणी के अग्रभाग को (प्रथमम्) सबसे पहली बार (प्रैरत) प्रेरित किया उस समय (यद्) जो कुछ (एषाम्) उनका (श्रेष्ठम्) उत्तम भाव था या जो कुछ (अरिप्रम्) पापरहित भाव (आसीत्) था (तत्) वह सब (एषाम्) इनके (गुहा=गुहायाम्) मन की गुफा में (निहितम्) छिपा था उसको उन्होंने (प्रेम्णा=प्रेम्णा) प्रेमपूर्वक (आवि:) आविष्कृत कर दिया।

व्याख्या–इस मन्त्र में सृष्टि की आदि में भाषा किस प्रकार उत्पन्न हुई इसका मौलिक वर्णन है। जब सृष्टि उत्पन्न होती है तो पृथिवी, सूर्य, नदी, पर्वत, वृक्ष आदि जड़पदार्थ और पशु-पक्षी, कीट-पतंग, मनुष्य आदि सजीव या चेतन चीजें उत्पन्न होती हैं। निर्जीव पदार्थ तो ज्ञानशून्य होते हैं, उनमें इच्छा, द्वेष, सुख, दु:ख, ज्ञान तथा प्रयत्न का अभाव होता है। वे केवल सजीव पदार्थों के प्रयोग अर्थात् प्रयोजन सिद्धि की वस्तुएँ हैं। उनका स्वयं कोई प्रयोजन नहीं। कलम, कागज जड़ हैं। मैं उनका प्रयोग (प्र+युज) करता हूँ। प्रयोजन मेरा है, कलम और कागज का अपना कोई प्रयोजन नहीं। मैं उनका प्रयोग न करूँ तो मुझ जैसा कोई चेतन पदार्थ ही इनका प्रयोग करेगा। मेरा प्रयोजन था लिखना, अत: मैंने कलम और कागज दोनों से लिखने का प्रयोजन सिद्ध किया। ज्ञानपूर्वक कलम बनाई और ज्ञानपूर्वक उससे काम लिया। यदि मेरे समान ज्ञानवाला कोई मनुष्य कलम और कागज का प्रयोग न करे तो मेरे समान ही चेतन और सजीव, परन्तु ज्ञान की अपेक्षा मुझसे सर्वथा भिन्न कीड़े-मकौड़े या घुन कागज और कलम दोनों का अपनी योग्यता के अनुसार प्रयोग करेंगे और यदि इस प्रकार के प्राणियों के हाथ भी ये चीजें न आईं तो सृष्टि के भौतिक नियमों द्वारा कार्यरूप कलम और कागज कारणरूप मिट्टी में विलीन हो जायेंगे। इस प्रकार समस्त सृष्टि रचना प्रयोज्य और प्रयोजक दो श्रेणियों में विभक्त है। समस्त जड़ जगत् प्रयोज्य है। प्रयोजक जगत् दो प्रकार का है–मनुष्य और मनुष्येतर। मन तो दोनों के पास है। परन्तु मन के विकास का एक विशेष स्तर है जिससे मनन-शक्ति कहते हैं। यह मनुष्य[1] जाति की ही विशेषता है। मननशक्ति का सम्बन्ध विचारधारा से है। विचारधारा का सम्बन्ध दो इन्द्रियों से है–एक ज्ञान इन्द्रिय जिसको कान कहते हैं, दूसरी कर्म इन्द्रिय जिसको वाक् या वाणी कहते हैं। वाक् बोलने की शक्ति और व्यापार का भी नाम है और बोलने के शरीर-अवयव अर्थात् वाक् इन्द्रिय के गोलक का भी नाम है। जीभ के अग्रभाग से हम बोलते हैं। वेदमन्त्र में '**वाचं अग्रं प्रैरत**' अर्थात् मनुष्यों ने अपनी जीभ के अग्रभाग को हिलाया या बोलने की शक्ति का प्रयोग प्रारम्भ किया। बोलने के व्यापार का एक सिरा वाक् और दूसरा सिरा कान। बोलना आरम्भ होता है वाणी से और समाप्त होता है कान पर। इसी का अनुकरण करके वैज्ञानिकों ने टेलीफोन के एक ही हत्थे में मुँह और कान दोनों का आयोजन किया है। हमारे भीतर जो विचार उठते हैं उनको हम दूसरों पर प्रकाशित करना चाहते हैं। इसीलिए हम जीभ को काम में लाते हैं परन्तु साथ ही जीभ से निकले हुए शब्द ठीक हैं या नहीं इसकी परीक्षा हमारा कान कर लेता है। दूसरे के कान में पहुँचने से पहले हम परीक्षा (चैक) कर लेते हैं कि जो माल हम दूसरे के पास भेज रहे हैं वह ठीक है या नहीं।

क्रमश: अगले अंक में......

1. मन्+उ=मनु, उणादि कोश 1.10
मनोरपत्यं यक् सुक् च–आप्टे का संस्कृत-इंगलिश कोश।

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी

❑ संकलन–कन्हैयालाल आर्य, संरक्षक–आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

प्रश्न 14. क्रोध किसको नष्ट कर देता है?

उत्तर-क्रोध शरीर की शोभा एवं सौन्दर्य को नष्ट कर देता है।

प्रश्न 15. पशुओं की स्वयं देखभाल न करने से क्या नष्ट हो जाता है?

उत्तर-पशुओं की स्वयं देखभाल न करने से पशु नष्ट हो जाते हैं।

प्रश्न 16. क्रुद्ध हुआ अकेला ब्राह्मण किसको नष्ट कर देता है?

उत्तर-क्रुद्ध हुआ अकेला ब्राह्मण सारे राष्ट्र को नष्ट कर देता है। आचार्य युधिष्ठिर मीमांसक जी ने इस सम्बन्ध में निम्न टिप्पणी की है-

ऐसी घटनाएं भारत के सुदीर्घ कालीन इतिहास में अनेक बार घटित हुई हैं। अकेले जामदग्न्य परशुराम ने आततायी क्षत्रियों से क्रुद्ध होकर अनेक बार पृथ्वी के आततायी प्रजापीड़क राजाओं को चुन-चुन कर मारा था। अकेले महामति चाणक्य ने मगध के आततायी नन्द सम्राट् को अपने बुद्धिचातुर्य द्वारा मारकर चन्द्रगुप्त मौर्य को मगध के सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया था।

केवल मन्त्र शक्ति ही सर्वत्र कृतकारी नहीं होती, ब्राह्मण को आततायियों के वध के लिए शस्त्र भी धारण करने पड़ते हैं। जामदग्न्य परशुराम का इतिहास इसमें साक्षीभूत है। आचार्य चाणक्य ने भी स्वयं अवसर पाकर नन्द को शस्त्र द्वारा मारा था। इसका संकेत स्वयं आचार्य चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र के अन्त में किया है-

येन शास्त्रं च शस्त्रं च नन्दराजगता च भूः।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम्॥

अर्थात् चाणक्य के पश्चात् भी जब भारत पर कुषाणों और हूणों के आक्रमण हुए तब मुलतान के आस-पास रहने वाले काठक शाखा के अध्येता ब्राह्मणों ने शस्त्र धारण करके उन्हें भारतभूमि से खदेड़ा था।

आचार्य भारद्वाज सुत द्रोण ने समर्थ ब्राह्मणों का स्वरूप इस प्रकार दर्शाया है-

अग्रतश्चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः।
उभाभ्यामपि समर्थोऽस्मि शापादपि शरादपि॥

मैं चारों वेदों को आगे (हृदय में धारण) करके और पीठ पर बाण सहित धनुष को धारण करके शाप और शर=बाण दोनों से नाश करने में समर्थ हूँ।

प्रश्न 17. राजा के घर में क्या-क्या वस्तुएँ रहनी चाहिएं?

उत्तर-यहाँ महात्मा विदुर जी धृतराष्ट्र को यह कह रहे हैं कि हे राजन्! तुम्हारे घर=महल में निम्नलिखित वस्तुएं अवश्य रहनी चाहियें-(1) बकरियां, (2) कांसे के पात्र, (3) चांदी के पात्र, (4) शहद, (5) विष का बोधन कराने वाले पात्र, (6) (शकुनिः) विष की पहचान कराने वाले मैना आदि पक्षी, (7) श्रोत्रिय=वेदज्ञ (वेदवित्) वेद की जानकारी वाला ब्राह्मण, (8) अपने कुल का वृद्ध पुरुष (9) कुलीन दुःखी पुरुष।

ये उपर्युक्त वस्तुएं राजा के प्रासाद में रहनी चाहियें। बकरियां, कांसे के पात्र, चांदी के पात्र, शहद, विष का बोधन कराने वाले पात्र या पक्षी विषमिश्रित अन्नपान आदि की परीक्षा करने में उपयोगी होते हैं। (चाणक्य के अर्थशास्त्र में विष की परीक्षा का विस्तार से वर्णन किया है) ब्राह्मण अधर्म में प्रवृत्त राजा को अधर्म से निवृत्त करने में समर्थ होता है। अपने वंश के वृद्ध पुरुष के सान्निध्य से उनके अनुशासन में रहने से राजा मार्गभ्रष्ट नहीं होता। कुलीन दुःखी पुरुष अपने आश्रयदाता का अनेक प्रकार से उपकार करता है।

क्रमशः अगले अंक में...

स्वास्थ्य-चर्चा

लहसुन के अनेक लाभ

गतांक से आगे....

"लहसुन उत्तेजक और चर्मदाहक होता है। एक शान्तिदायक और पाकस्थली को उत्तेजित करने वाले द्रव्य की तरह लहसुन पाचन क्रिया की सहायता करता है और अन्त को रस बनाने में मदद करता है और कोष्ठवायु को नष्ट करता है।

एक कफ निस्सारक द्रव्य की तरह यह वायु नलियों पर और फुफ्फुस सम्बन्धी ग्रन्थि रस पर अपना विशेष प्रभाव डालता है, जिससे ऐसे केसों में जिनमें वायुप्रणाली फैली हुई है और दुर्गन्धयुक्त कफ गिरता रहता है, यह उपयोगी होता है। फेफड़े के क्षय में इसका उपयोग करने से यह कफ गिरने का काम करता है। रात्रि के पसीने को रोकता है, भूख को बढ़ाता है और नींद को सुखपूर्वक लाता है।"

"एक ऋतुस्राव नियामक पदार्थ की तरह यह मासिक धर्म के प्रभाव को बढ़ाता है, शक्ति देता है, त्वचा और गुर्दे को उत्तेजना देता है और शान्ति प्रदान करता है। यह मूत्र की तादात को बढ़ाता है, इसलिए इसका प्रयोग जलोदर में भी होता है। हिस्टीरिया रोग में मूर्च्छित लड़कियों की नाक में इसको सुंघाने से उनकी मूर्च्छा भंग हो जाती है। इसको नमक के साथ देने से यह कालिक उदरशूल और स्नायविक मस्तकशूल को दूर करता है। छाती के ऊपर पुल्टिस की तरह इसका लेप किया जाता है। इसी प्रकार बच्चों के आक्षेप रोग में उनकी पीछे की रीढ़ पर इसका उपयोग किया जाता है। पेट और हृदय के बीच इसका लेप करने पर यह पाकस्थली की खराबी से पैदा हुए जुकाम को दूर करता है। पेट के कृमियों को नष्ट करता है। बीमारी के कीटाणुओं को दूर करता है। क्षय के जन्तुओं को नष्ट करता है। सूजन को बिखेरता है। चमड़े को जला देता है औ आर्द्रता का शोषण कर लेता है।"

इसकी गाँठों को तेल में भूनकर उस तेल की मालिश करने से जोड़ों का दर्द और जोड़ों की सूजन दूर होती है। इस तेल को कान में टपकाने से कर्णशूल दूर होता है।

लहसुन के चिकित्सा संबंधी प्रयोग और शरीर पर होने वाली इसकी सूक्ष्म क्रियाओं का ज्ञान भारतीय आयुर्वेद शास्त्रियों को प्राचीन काल से था। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी उनके इस ज्ञान का समर्थन करता है। भारतवर्ष में लहसुन का रोग कीटाणु नाशक द्रव्य की तरह प्रचुर मात्रा में उपयोग होता आया है और यह बात भी हाल ही में जानकारी में आई है कि जो लोग नियम पूर्वक लहसुन का भोजन की तरह सेवन करते हैं वे एन्फ्ल्यूएंजा और बेरीबेरी के समान भयंकर रोगों से बचे हुए रहते हैं। ऐसे लोगों में भी अगर इस प्रकार के रोगों का कभी-कभी आक्रमण होता हुआ दिखाई देता है तो इसका मूल कारण उनकी रहने की गंदी आदतें और उनके आसपास के दूषित वातावरण की गंदगी ही होती है।

प्रसवकाल के समय प्रसूता स्त्रियों को लहसुन देने का आम रिवाज है और उससे बहुत लाभ होता है। डिप्थीरिया अथवा रोहिणी रोगों से संदिग्ध केसों में और कुछ छूत की बीमारियों में भी जो एक रोगी से दूसरे रोगी को लगती हैं, इसका उपयोग करने से लाभ होता है। हाल ही आधुनिक शोधों से यह भी मालूम हुआ है कि ट्यूबरक्युलोसिस अथवा क्षय की चिकित्सा में भी यह एक प्रभावशाली औषधि है। मतलब यह कि इस वनस्पति के सम्बन्ध में जो जानकारी प्राप्त हुई है उससे मालूम होता है कि लहसुन का बिना फिल्टर किया हुआ ताजा रस एक बहु उत्तम वस्तु है और हर बीमारी में इसका इसी प्रकार उपयोग करना चाहिए। अलकोहल के अन्दर इसके तेल को मिलाकर अगर इसका इंजेक्शन दिया जाए तो वह लाभ के बजाय हानिकारक प्रतिक्रया करता है। इसलिए इस रूप में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए।

लहसुन और बाजीकरण–कामोद्दीपन के लिए भी लहसुन एक बहुमूल्य वस्तु है। बुढ़ापे के प्रारम्भ में जब मनुष्य की कामशक्तियाँ जीर्ण होने लगती हैं, अगर लहसुन की कलियों को घी में तलकर उनका नियम पूर्वक सेवन किया जाए तो मनुष्य की कामशक्ति हमेशा स्थिर और उत्तेजित रहती है।

क्रमशः अगले अंक में...

महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश—वैज्ञानिक सोच (साइंटिफिक टेंपर) तथा प्रखर बुद्धिवाद को अपनाएं

❑ डॉ० भवानीलाल भारतीय

दयानन्द ने जहां मानव की चिन्तन-शृंखला को नये आयाम दिये हैं, वहां उनके क्रांतिकारी चिन्तन का एक प्रमुख सूत्र बुद्धिवाद तथा मानवी विवेक को अपने कार्य-अकार्य का पथ-निर्देशक बनाना भी था। उनका पद-पद पे यह उपदेश रहा कि परमात्मा ने इन्सान को विवेक दिया है, सद्-असद् को पहचानने की शक्ति दी है। उसे पाखण्डों, अंधविश्वासों तथा हानिकर रूढ़ियों से बचकर स्वस्थ, गरिमामय तथा स्वाभिमान युक्त जीवन जीने का सामर्थ्य दिया है। तब वह किसलिए अपनी बुद्धि और विचार शक्ति को ताक पर रखकर अंधानुकरण में प्रवृत्त हो मध्यकाल के अंधकारमय युग में जब वैदिक ज्ञान की प्रोज्ज्वल प्रकाशधारा अंधविश्वास और अंधश्रद्धा के तिमिर जाल से आच्छन्न हो गई थी, दयानन्द ने प्रत्येक बात को तर्क तुला पर तोलने का आग्रह किया और मनुष्य के विवेक को सर्वोपरि रखा।

मध्यकाल में पनपे तथाकथित भक्तिवाद का यह अभिशाप था कि उसने कर्मण्यता, पुरुषार्थ तथा संघर्षपूर्ण स्थितियों का सामना करने की अपेक्षा पलायनवाद, भाग्यवाद में तथा यथास्थितिवाद को प्रोत्साहन दिया। इसका स्पष्ट कारण था कि लोगों ने युक्ति एवं तर्क को तिलाजंलि देकर बाबा वाक्यं प्रमाणम् का रास्ता अपनाया जबकि पुरातन वैदिक चिन्तन प्रत्येक स्थिति में युक्ति एवं तर्कपूर्वक धर्म के अनुसंधान का समर्थन करता है। यास्क ने निरुक्त में तर्क को ऋषि की संज्ञा दी तथा स्मृतिकार मनु की स्पष्ट घोषणा थी कि जो तर्कपूर्वक धर्म का अनुसंधान करता है, वही धर्म के तत्त्व को जानता है। दयानन्द भी इसी युक्तिवाद तथा तर्कवाद के प्रबल पोषक थे। उनका स्पष्ट कथन है कि धर्म और धार्मिक परम्पराओं की जो बातें युक्ति एवं तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हैं वे ही मान्य और आचरण के योग्य हैं। इसके विपरीत विज्ञान और सृष्टि क्रम के विरुद्ध मान्यतायें और आचरण कूड़ेदान में फेंकने के योग्य हैं।

बुद्धिवाद और युक्तिवाद अथवा वैज्ञानिक सोच जैसे शब्दों के लिए दयानन्द का मुहावरा है—सृष्टिक्रम के अनुकूल होना। उनकी दृष्टि में जो कथन और मान्यताएं सृष्टि के शाश्वत नियमों के अनुकूल हैं, जिन्हें वैज्ञानिक तथ्यों से पुष्ट एवं प्रमाणित किया जा सकता है वे ही मान्य हैं, स्वीकार करने तथा आचरण करने के योग्य हैं। इसी कसौटी को काम में लाकर उन्होंने न केवल प्रचलित हिन्दूधर्म में मान्य पौराणिक देवगाथावाद से सम्बद्ध चमत्कार मूलक, अवैज्ञानिक तथा अविश्वास योग्य विश्वासों, विचारों तथा घटनाओं को ख़ारिज कर दिया अपितु बौद्ध, जैन, ईसाइयत तथा इस्लाम सम्प्रदाय में उल्लिखित विज्ञान विरुद्ध अंध धारणाओं तथा मत-विश्वासों को भी अमान्य ठहराया।

ध्यान रहे कि दयानन्द ने जिसे सृष्टिक्रम के अनुकूल होना बताया था, उसे वर्तमान युग में वैज्ञानिक सोच (Scientific thinking) का नाम दिया गया है। वर्तमान विश्व-सभ्यता को इस बात का गर्व है कि वह विज्ञान के सत्य को महत्त्व देती है तथा विश्व मानव में सतर्क चिन्तन तथा विज्ञानाधारित मान्यताओं को अपनाने की वकालत करती है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू को चाहे नास्तिक कहें या आस्तिक, एक बात के लिए उनकी प्रशंसा करनी होगी कि वे स्वदेशवासियों में इसी वैज्ञानिक सोच तथा युक्ति सिद्ध तार्किकता को फलता-फूलता देखना चाहते थे। यह दुर्भाग्य रहा कि उनके बाद के राष्ट्रनेता अंधविश्वासों के अंधकूप से न स्वयं को बचा पाये और न जनता का स्वस्थ मार्गदर्शन कर पाये। ऐसे अंधविश्वास ग्रस्त नेता सदा पण्डे-पुजारियों, ज्योतिषियों और बाबाओं के जाल में फंसे रहे और मसजिदों, मकबरों, जलाशयों और देवालयों में धक्के खाते रहे। वे ज्योतिषियों के मुहूर्तों तथा मठाधीशों के भविष्य कथनों में विश्वास कर अपनी गद्दी को सुरक्षित समझते रहे।

धार्मिक अंधविश्वासों और तर्क विरुद्ध मान्यताओं का खण्डन करने में दयानन्द ने किसी मत-पंथ, पण्डे-पुजारी, मुल्ला-मौलवी या पादरी और धर्माध्यक्ष को नहीं बख़्शा।

शेष पृष्ठ 16 पर....

महर्षि दयानन्द के जीवन में अनेक बार आये मृत्युप्राप्ति के क्षण

❑ **खुशहालचन्द्र आर्य**, 180 महात्मागांधी रोड, (दो तल्ला) कोलकाता-7

महर्षि देवदयानन्द के जीवन में अनेक ऐसे क्षण आये जिनमें महर्षि जी को अपने जीवन की जोखिम उठानी पड़ सकती थी, परन्तु महर्षि जी ने अपने साहस, धैर्य, बल, कुशाग्र बुद्धि तथा ईश्वर पर अटूट विश्वास के कारण वे अपने जीवन को बचा सके। मैंने महर्षि जी के जीवन का जितना अध्ययन किया है जिनमें निम्नलिखित क्षण ऐसे आए हैं जिनमें उनका जीवन समाप्त हो सकता था, परन्तु महर्षि जी के भाग्य ने उनका साथ दिया जिससे वे अपने जीवन को बचा सके। वे कुछ क्षण या मौके इसी भान्ति हैं–

1. बचपन की घटना–महर्षि देवदयानन्द अपने माता-पिता की प्रथम सन्तान थे, इसलिए बड़े लाड़-चाव से पाले गये थे। इनको गहने, अंगूठी, मूल्यवान् कपड़ों से सजाकर रखते थे। इनको खिलाने-पिलाने, नहाने-धोने व खेलाने के लिए एक नौकरानी यानि दायी रखी हुई थी। वह दयानन्द के बचपन का नाम मूलशंकर को खिलाती-पिलाती, नहलाती-धुलाती, खेलाती थी। एक दिन मूलशंकर के काफी गहने व मूल्यवान् कपड़े पहना देखकर दायी के मन में लालच आ गया और वह सोचने लगी कि किसी नदी के किनारे इस बच्चे को ले जाकर इसके गहने, अंगूठी तथा मूल्यवान् कपड़े उतारकर मैं रख लूँगी और बच्चे को मारकर नदी में बहा दूँगी। ऐसा ही करने के लिए वह मूलशंकर को नदी के किनारे ले गई और उसके गहने, अंगूठी उतारने लगी तभी मूलशंकर दयाभरी नजर से दायी को देखा तो दायी का मन पिघल गया और वह गहने न उतारकर उसको घर ले गई। यह घटना स्वामी दयानन्द की प्रथम मौत से बचने की घटना है। यह घटना महर्षि की प्रत्येक जीवनी में नहीं लिखी है, लेकिन किसी-किसी जीवनी में लिखी है, सो जानना।

2. दुर्गा के भक्तों द्वारा मारने का प्रयास–तुंगनाथ पर्वत की तलहटी से चलकर महर्षि जी कुछ आगे बढ़े तो उनको कुछ झोपड़ियाँ जिसमें रात्रि विश्राम के लिए बस्ती में चले गये। बस्ती निवासियों ने महर्षि जी की बड़ी सेवा की और विनम्र प्रार्थना की कि आप कुछ दिन यहीं ठहर जाओ। महर्षि जी उनके प्रेम को देखकर वहीं कुछ दिन ठहरने का निश्चय किया। वह बस्ती दुर्गा भक्तों की थी। दुर्गा पर्व आ गया तो वे सब भक्त लोग महर्षि जी को दुर्गा मन्दिर में ले गये। मन्दिर के द्वार पर एक मजबूत देहधारी व्यक्ति हाथ में खाण्डा लिए देखा। महर्षि जी मूर्ति के समीप पहुँच गये। वहीं अधेड़ आयु का पुजारी खड़ा था। साथ आये दुर्गा के भक्तों ने कहा, "स्वामी जी! एक बार आप दुर्गा के सम्मुख नतमस्तक होकर प्रणाम अवश्य कीजिए।" स्वामी जी ने दृढ़तापूर्वक कहा, "मैं मूर्तिपूजक नहीं हूँ।" इस पर पुजारी क्रोधित हो गया और उसने स्वामी जी की गर्दन को कसकर पकड़ा और मूर्ति के सामने झुकाना चाहा, पर वह उस वज्र देह की गर्दन को हिला भी नहीं सका। स्वामी जी मुड़े तो एक खड्गधारी व्यक्ति उनकी गर्दन पर वार करना चाहता था, तो सिंह-सी स्फूर्ति से खड्ग उसके हाथ से छीनकर मन्दिर के प्रांगण में निकल आये। वहाँ कई दुर्गाभक्त हाथों में शस्त्र लेकर उन पर टूट पड़े। स्वामी जी ने तेजी से खड्ग घुमाते हुए मन्दिर की दीवार फांदकर अन्धेरे में विलीन हो गये। इस प्रकार स्वामी जी ने अपनी जान बचाई।

3. रीछ का सामना करने की घटना–बदरीनारायण से रामपुर होते हुए स्वामी जी काशीपुर पहुँच गये। वहाँ से उत्तर भारत का भ्रमण करके नर्मदा के तट पर पहुँचने के बाद उसके आदिस्रोत की ओर इस आशा से चल पड़े कि सम्भव है कहीं किसी विलक्षण सन्त के दर्शन हो सकें। रास्ता विकट था, कुछ दूरी तक पगडण्डियों के निशान मिले। धीरे-धीरे वे भी विलुप्त हो गये। बस्ती होने का कहीं कोई संकेत नहीं दिखता था। किधर जाना चाहिए, स्वामी जी सोच ही रहे थे कि सामने से एक विशालकाय काला रीछ दौड़ता हुआ आता दिखाई दिया। वह कुछ दूरी पर ठहरकर पिछले पैरों पर खड़ा हो गया और जोर से चिंघाड़ा। वह उन पर वार करना चाहता था कि स्वामी जी स्फूर्ति से अपना डण्डा जैसे ही उसकी तरफ बढ़ाया, वह उनके सामने ठहर न सका। परन्तु जाते समय रीछ इतनी जोर से चीखा कि उसकी आवाज सुनकर पहाड़ी लोग अपने कुत्तों सहित वहाँ उपस्थित हो गये और स्वामी जी से बस्ती में आने की प्रार्थना की। परन्तु स्वामी जी ने उन्हें विनम्रता पूर्वक लौटा दिया और अपनी राह पर बढ़ चले।

4. राव कर्णसिंह से सामना-स्वामी जी विभिन्न स्थानों में धर्मचर्चा और पाखण्डों का खण्डन करते हुए सम्वत् 1925 (सन् 1868 ई०) के ज्येष्ठ मास में कर्णवास पहुँच गये। उस समय कर्णवास में गंगा के मेले की धूम थी। उस अवसर पर करौली के रईस राव कर्णसिंह भी अपने दल-बल सहित गंगास्नान के लिए आये हुए थे। उन्होंने एक ओर गंगा के किनारे मंडप बनवाकर रासलीला का आयोजन किया। मेले में पधारे सभी साधु-सन्तों और पण्डितों को उसमें आमन्त्रित किया। उसका आमन्त्रण महर्षि जी को भी मिला, परन्तु महर्षि जी उसमें सम्मिलित नहीं हुए और रासलीला का खण्डन करते रहे।

अगले दिन राव कर्णसिंह अपने समर्थकों सहित महर्षि जी की कुटिया पर आ पहुँचे और क्रुद्ध होकर बोले, ''सभी साधु-सन्त हमारी रासलीला में पधारे! आप क्यों नहीं आए?'' महर्षि उसकी भाव-भंगिमाओं से उसका उद्देश्य समझ गये थे। उन्होंने उत्तर दिया, ''हम ऐसे निन्दनीय कृत्यों में सम्मिलित नहीं होते हैं।''

क्रोध से उसके नेत्र लाल हो गये। वह गरजकर बोला, ''आप रासलीला को निन्दनीय कृत्य कहते हैं, आप गंगा और अवतारों की निन्दा भी करते हो। मैं इनकी निन्दा करने वालों के साथ अच्छा वर्ताव नहीं करता हूँ। आपको संभलकर बोलना चाहिए और उसका हाथ तलवार की मूठ पर चला गया।'' महाराज के उपदेश सुन रहे सज्जनों के चेहर पर अनिष्ट घट जाने के भाव अंकित होने लगे। परन्तु महर्षि जी सहज भाव से बोले, ''हम किसी की निन्दा नहीं करते हैं, जिसे जैसा देखते हैं वैसा ही कहते हैं। हमारे सामने कोई हमारे महापुरुषों का स्वांग भरे और हम उसे देखते रहें, यह कार्य अति निन्दनीय है। अति निर्बल व्यक्ति भी अपने पूर्वजों के स्वांग का सहन नहीं कर सकता। आप अपने महापुरुषों का ऐसे व्यक्तियों द्वारा स्वांग भराते हो जो आचरण पतित हैं। ऐसे कार्य करते हुए लज्जा आनी चाहिए।''

महर्षि जी की यह वार्ता सुनकर राव कर्णसिंह आपे से बाहर हो गये। वे अपनी तलवार लेकर उठ खड़े हुए। उनके साथ उनके समर्थक भी खड़े हो गये। शस्त्र भी उनके पास थे। ऐसा देखकर श्रद्धालु जन घबरा गये, परन्तु स्वामी जी ने मुस्कुराते हुए कहा, ''कर्णसिंह साधुओं से शास्त्रार्थ किया जाता है, यदि आपको शस्त्रार्थ करना ही है तो फिर महाराजा जयपुर या जोधपुर से जाकर भिड़ना चाहिए और यदि शास्त्रार्थ करना चाहते हो तो वृंदावन से अपने गुरु रंगाचार्य को ले आइए।''

गुरु का नाम सुनते ही राव कर्णसिंह की आँखों में खून उतर आया। उसने तलवार को म्यान से बाहर निकाल लिया और महर्षि जी को अपशब्दों से सम्बोधित किया। यह दृश्य देखकर श्रोताओं की सांसें रुक गई। राव कर्णसिंह क्रोध में अन्धा हो गया था। उसने तलवार वाला हाथ ऊँचा किया और महर्षि जी की ओर बढ़ा। महर्षि जी सम्भलकर बैठे हुए थे। उन्होंने स्फूर्ति के साथ उसका खड्ग वाला हाथ की कलाई से पकड़ लिया और इतने बल से दबाया कि उसके हाथ से तलवार छूट गई। उसे पसीना आ गया, चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी। महर्षि जी ने बाएं हाथ से तलवार की मूठ पकड़ उसकी नोंक को धरती पर टेककर इतने जोर से दबाया कि तलवार के दो टुकड़े हो गये। महर्षि जी ने कहा, ''हम संन्यासी हैं। जाओ परमात्मा तुम्हारा हित करे और तुम्हें सद्बुद्धि प्रदान करे।''

5. स्वार्थी जनों द्वारा स्वामी जी की प्राणहानि का प्रयास-भारतवर्ष में उस समय महर्षि देवदयानन्द ही ऐसे अकेले साधु थे जो धर्मान्धता, छुआ-छूत, अन्धविश्वास, पाखण्ड, जातिगत भेदभाव और अशिक्षा के विरुद्ध जूझ रहे थे। प्रबुद्ध लोग उनके अनुयायी बन सद्धर्म के प्रचार में सहयोगी हो गये थे। परन्तु पाखण्डी और ढोंगी लोग उनके प्राण लेने में उतर गये थे।

शहबाजपुर (उ०प्र०) में रहते हुए ठाकुर गंगासिंह उनके भक्त बन गये थे। नित्य उनके प्रवचन सुनने जाते। एक दिन दो वैरागी बाबा, ठाकुर गंगासिंह जी के पास आये और उनसे कुछ समय के लिए अपनी तलवार दे देने के लिए कहा। उन्होंने तलवार लेने का कारण पूछा तो वे आवेश में बोले, ''गप्पाष्टिक दयानन्द के जीवन का हम अन्त कर देना चाहते हैं। वह देवी-देवताओं का अपमान करता है। भागवत का खण्डन करता है। अब वह हमारे हाथों से बचकर कहीं नहीं जा सकता।''

ठाकुर गंगासिंह ने कहा, ''वे तो उत्तम साधु हैं। उनका संग करने के बाद ही आप उनको समझ सकोगे। याद रखना इस विचार को लेकर पुनः मेरे पास आने का साहस न करना। अन्यथा इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा।'' ऐसा सुनकर वे चले गये। इसके उपरान्त ठाकुर साहब महर्षि जी की सेवा में पधारे और उन्हें वैरागियों की पूरी घटना कह सुनाई। महर्षि

जी मुस्कुराये और बोले, ''मेरा वध करने का सामर्थ्य उनमें नहीं है। आप निश्चिन्त होकर विश्राम करिये।'' इस पर भी गंगासिंह ठाकुर पूरी रात महर्षि जी की सेवा में प्रहरी की तरह जागते रहे।

6. वैष्णव-मतावलम्बी द्वारा महर्षि जी की प्राणहरण की चेष्टा-आश्विन सुदी 12 संवत् 1931 (सन् 1874 ई०) को महर्षि जी ने मुम्बई निवासियों के आग्रह पर उस नगर में प्रवेश किया। नगर वासियों ने रेलवे स्टेशन पर उनका भव्य स्वागत किया और गोसाइयों के अखाड़े में बालुकेश्वर पर उनको ठहरा दिया। श्रोताओं की संख्या अधिक होने के कारण कोट मैदान में एक विशाल मण्डप का प्रबन्ध किया गया। महर्षि जी के प्रवचनों को सुनने के लिए हजारों की संख्या में लोग सभा भवन पर नित्य ही उपस्थित होते। पाखण्ड की रीढ़ पर चोट करने से महर्षि जी कभी नहीं चुकते थे, इसलिए महर्षि जी जहाँ भी जाते वहीं विरोधियों की भी कमी नहीं होती। उस समय मुम्बई में वैष्णव मत का अच्छा प्रभाव था। उनका प्रचार था कि तन, मन, धन सब गुरु के अर्पण। महर्षि जी ने इसका घोर विरोध किया। जब सर्वस्व ही गुरु को समर्पित कर दिया तो परिवार व समाज के लिए क्या शेष रह गया? इस समर्पण की आड़ में आवंछित घटनाएँ घट जाने की सम्भावना बनी रहती है। यह सुनकर वैष्णव मतावलम्बी जीवन गोंसाई महर्षि जी पर अति क्रोधित हुआ। इस बात की जानकारी महर्षि जी को हो गई थी। उसने अपने षड्यन्त्र का माध्यम महर्षि जी का सेवक बलदेवसिंह को बनाया। बलदेव लोभ में फँस गया। एक हजार रुपयों की राशि के मोह ने उसे अन्धा बना दिया। जीवन गोसाई खुश था। वह समझता था कि बलदेव महर्षि जी का विश्वासपात्र सेवक है। भोजन में विषादि देने में उसे कोई असुविधा नहीं होगी। उसने बलदेवसिंह को महर्षि जी का देहावसान हो जाने पर एक हजार रुपये देने के लिए लिखित आश्वासन दे दिया और पांच रुपये और एक सेर मिठाई अग्रिम उसे दे दी थी।

जब बलदेवसिंह महर्षि जी के सामने आया तब उसके चेहरे के भाव महर्षि जी को बदले-बदले लगे। उनके मन में सन्देह उत्पन्न हो गया। उन्होंने उससे पूछ लिया, ''गोसाइयों के यहाँ गया था?'' बलदेवसिंह का शरीर कांपने लगा। उसने गर्दन हिलाकर हाँ भी भरी। महर्षि जी मुस्कुराए और बोले, ''तो दयानन्द के सांसों का हरण करनेके लिए कितने में सौदा तय हुआ?'' बलदेवसिंह महर्षि जी के चरणों में गिर पड़ा और उसने पूर्व घटी घटना कह सुनाई। उसने क्षमा कर देने के लिए महर्षि से प्रार्थना की और भविष्य में गोसाइयों के यहां न जाने की प्रतिज्ञा की।

महर्षि जी ने उसे क्षमा तो कर दिया, परन्तु उसको अपने पास नहीं रखा। जीवन गोसाई अपने इस षड्यन्त्र में सफल नहीं हुआ, तो उसने दूसरी चाल चली उसने भाड़े पर चार गुण्डे महर्षि दयानन्द की हत्या कर देने के लिये तैयार किये। महर्षि जी नित्य नियम से समुद्र तट पर भ्रमण के लिए जाया करते थे। वे गुण्डे महर्षि जी का पीछा करने लगे। महर्षि जी को समझते देन नहीं लगी। एक दिन महर्षि जी उसके सामने खड़े हो गये और गम्भीर वाणी में कहा, ''तुम मेरी हत्या करना चाहते हो?'' महर्षि जी के बोलते ही उनके पैरों तले जमीन खिसक गई। वे कुछ देर तक भी उनके सम्मुख खड़े नहीं हो सके। जीवन गोसाई इतना भयभीत हुआ कि उसने मुम्बई छोड़ दी। वह मद्रास भाग गया।

वैसे तो स्वामी जी को सत्रह बार विष दिया गया, परन्तु इन्होंने न्यौली क्रिया द्वारा विष को बाहर निकाल दिया। जिसमें एक घटना अधिक प्रचलित है कि एक धर्मान्धा ब्राह्मण ने स्वामी जी को पान में विष दे दिया। एक सैयद मोहम्मद नामक तहसीलदार जो स्वामी जी का अनन्य भक्त था उसको मालूम पड़ने पर उस ब्राह्मण को जेल में डाल दिया और स्वामी जी को यह सारी बात बताई। स्वामी जी ने कहा कि हम तो लोगों को बन्धनों से मुक्ति दिलाने आये हैं, बन्धन कराने नहीं। तब तहसीलदार ने उस दोषी को छोड़ दिया। काशी के प्रसिद्ध शास्त्रार्थ के समय भी पण्डित लोगों ने गुण्डे बदमाशों को अपने साथ ले जाने के लिए बुला रखा था जिससे वे अपनी हार को छिपाने के लिए उनसे स्वामी जी के ऊपर ईंट, पत्थर फिंकवाकर हल्ला-गुल्ला करवा सकें। वैसा ही किया भी परन्तु रघुनाथ सहाय जो स्वामी जी का परम भक्त था, उसने स्वामी जी की जान बचा ली। एक बार स्वामी जी अलकनन्दा बर्फीली नदी में उस पार जाने के लिए नदी में उतर गये और काफी कष्ट सहा। इसी प्रकार स्वामी जी नर्मदा नदी के तट पर जाते हुए उनको भीषण व भयंकर जंगलों की खाक छाननी पड़ी और जंगली भयंकर जानवरों से अपनी जान बचाई। परन्तु इस लेख में केवल छह बड़ी घटनाओं का विवरण किया है।

आशा है सुधीपाठक गण इस लेख को पढ़कर अपने ज्ञान की वृद्धि करेंगे जिससे मेरा परिश्रम भी सार्थक होगा।

आतंकवाद के भयानक रूप

❑ राजेश आर्य, गांव आट्टा, जिला पानीपत मो० 9991291318

गतांक से आगे....

पूज्यपाद आचार्य श्री आनन्द प्रकाश जी (रंगारेड्डी) ने '**मीमांसा दर्शन**' पुस्तिका में लिखा है-"यद्यपि अब उत्तर भारत में श्रौतयज्ञों की परम्परा प्राय: लुप्त हो गई है। जो करते हैं, वे प्राय: पशुओं के अंगों को काटकर अग्नि में नहीं डालते, क्योंकि उधर बहुत से संगठनों ने इसका प्रबल विरोध किया। किन्तु दक्षिण भारत में पशुओं के अंगों को काटकर याग में डालने की परम्परा अभी प्रचलित है। हमने इस बीभत्स-प्रक्रिया को स्वयं देखा है। कुछ दिनों पूर्व जनवरी 2007 में हैदराबाद से विजयवाड़ा मार्ग पर एक मन्दिर के प्रांगण में सौत्रामणि आदि यागों में तीन दिन तक बहुत-सी भेड़-बकरियों के अंगों को काट-काटकर आहुति के रूप में डाला गया। भेड़ की वपा (अन्दर की सफेद झिल्ली) को कंटीली झाड़ी की टहनी पर फैलाकर सेंक कर घी के साथ मिलाकर आहुतियाँ दी गयीं। भेड़-बकरियों का दम घोटकर (मारकर), फाड़कर उनके एक-एक अंग (हृदय आदि) को निकालकर, आलू की तरह उबालकर, आगे-पीछे के टुकड़े काट-काटकर घी के साथ मिलाकर आहुतियाँ दी गयीं। कुछ आर्य बन्धुओं ने विरोध किया, तो उसे पुलिस की सहायता से दबा दिया गया। ऋत्विग् वर्ग का कथन था कि हम तो सब कुछ वेद के अनुसार अनुष्ठान कर रहे हैं...।"

"मैंने स्वयं विद्यार्थियों के साथ उनकी प्रयोग-विधि को जानने की दृष्टि से मन को अति कठोर करके देखा। विद्यार्थियों से तो पूरा देखा नहीं गया। अन्यत्र (केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु आदि में) भी ये अनुष्टान होते रहते हैं।"

घोर स्वार्थी मानव (दानव) द्वारा की जा रही निरपराध प्राणियों की हत्या को देखकर करुणामूर्ति महर्षि दयानन्द का हृदय रो पड़ा और अपनी वेदना को लगभग 125 वर्ष पूर्व 'गोकरुणानिधि' में व्यक्त करते हुए लिखा है-

"हे धार्मिक सज्जन लोगो! आप इन पशुओं की इच्छा तन, मन और धन से क्यों नहीं करते? हाय! बड़े शोक की बात है कि जब हिंसक लोग गाय, बकरे आदि पशु और मोर आदि पक्षियों को मारने के लिए ले जाते हैं, तब वे अनाथ तुम हमको देख के राजा और प्रजा पर बड़े शोक प्रकाशित करते हैं कि देखो! हमको बिना अपराध बुरे हाल से मारते हैं और हम रक्षा करने और मारने वालों को भी दूध आदि अमृत पदार्थ देने के लिए उपस्थित रहना चाहते हैं और मारे जाना नहीं चाहते। देखो! हम लोगो का सर्वस्व परोपकार के लिए है और हम इसलिए पुकारते हैं कि हमको आप लोग बचावें। हम तुम्हारी भाषा में अपना दु:ख नहीं समझा सकते और आप लोग हमारी भाषा नहीं जानते, नहीं तो क्या हम में से किसी को कोई मारता तो हम भी आप लोगों के सदृश अपने मारने वालों को न्यायव्यवस्था मे फांसी पर न चढ़वा देते? हम इस समय अतीव कष्ट में हैं, क्योंकि कोई भी हमको बचाने में उद्यत नहीं होता।"

अपने आहार में मांसाहार को शामिल करने वाले देश-विदेश के करोड़ों मनुष्य चाहे स्वयं को धार्मिक या आस्तिक न भी मानते हों, पर वे आतंकवादी हत्यारे तो हैं ही। क्योंकि सभी प्राणियों के पास उनकी सबसे कीमती वस्तु उनके प्राण होते हैं और अपने क्षणभर के मनोरंजन के लिए निरपराध प्राणी से उसके प्राण छीन लिए जाते हैं। इस अन्याय व अत्याचार को आतंकवाद नहीं तो और क्या कहें?

मानव की यह क्रूरता पशु-पक्षियों तक ही सीमित नहीं रही। कुछ भौतिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए वह सहधर्मी मानव की बलि देने से भी नहीं चूकता। फिर वह चाहे धर्म की आड़ ले या राजनीति की।

'दयानन्द सन्देश' जनवरी, 1998 के अंक में श्री विश्वनाथ प्रसाद, बिलासपुर (मध्य प्रदेश) ने भारत में मनुष्य बलि की निर्दयतापूर्ण घटनाओं का वर्णन किया है, जो सिद्धि पाने, धन पाने, उपज बढ़ाने, सन्तान प्राप्ति आदि के लिए की गई थीं। इक्कीसवीं शताब्दी के मानव द्वारा अपने-परायों की निर्दयता पूर्वक की गई हत्याओं का विवरण पढ़कर हृदय कांप उठता है। हाय, अविद्या! तेरी करतूत।

जैसे आर्यसमाज के प्रारम्भिक 50 वर्षों में आर्य प्रचारकों पंडित चिरंजीलाल, पंडित लेखराम, पंडित तुलसीराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महाशय राजपाल, भक्त फूलसिंह आदि की मजहबी उन्माद में इस्लाम के गुण्डों द्वारा हत्याएँ की गई थीं। उसी प्रकार केरल में सी.पी.एम. (कम्युनिस्ट पार्टी) के गुण्डों द्वारा 1990 से लेकर अब तक आर.एस.एस. के 500 से अधिक कार्यकर्त्ताओं की हत्या की जा चुकी है। श्री विष्णु गुप्त ने 'पंजाब केसरी' में 18.05.2016 को लिखा है कि कभी बड़े मार्क्सवादी रहे टी.पी. चन्द्रशेखरण ने सी.पी.एम. से नाता तोड़कर अपनी रैवोल्यूशनरी मार्क्सवादी पार्टी का गठन कर लिया, तो सी.पी.एम. वाले गुण्डों ने उन्हें काट-काटकर उनकी हत्या कर दी। सुलोचना नामक महिला के सामने उसके 26 वर्षीय पुत्र सुजीत के पैर तोड़ डाले। उसके बाद उसके बाजुओं को तोड़ा गया, फिर उसके सिर को कुचलकर उसकी हत्या कर दी गई। क्योंकि उसने सी.पी.एम. छोड़कर आर.एस.एस. से सम्बन्ध जोड़ा था।

प्रबुद्ध पाठक! सोचिये, साम्यवाद (समान भाव) का नारा देने वाले मार्क्सवाद या समाजवाद में यह हिंसक भावना कहाँ से आयी? वास्तव में फैक्ट्री के मालिक की हत्या कर उस पर अधिकार करने के लिए मजदूरों को प्रेरित करने वाले समाजवाद के मूल में ही हिंसा समाई हुई है। कर्मफल व्यवस्था व ईश्वर के अस्तित्व को नकारने वाले ये लोग गाड़ी में चलने वाले को टांग पकड़कर नीचे खींचकर पैदल चलने वालों के साथ चलाना चाहते हैं। इतिहासवेत्ता विचारकों का कथन है कि कुल मिलाकर साम्यवादी सामाज्यवाद ने 75 वर्ष के शासनकाल में जो विश्व में नरसंहार तथा बर्बरतापूर्ण अत्याचार किए, उसकी मिशाल विश्व के इतिहास में कहीं भी नहीं है।

ऊपरवर्णित व्यक्तिगत व सामूहिक आतंकवाद को समाप्त करने के लिए आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्य जी ने उपाय सुझाते हुए लिखा है–सच्चे ईश्वर की व्यक्तियों के मस्तिष्क में स्थापना करना, समाज के अन्याय, अत्याचार व अभाव को समाप्त करना, शिक्षा का प्रचार करना व खूंखार हत्यारों को सार्वजनिक्र रूप से कठोर दण्ड देना। तभी शान्ति का साम्राज्य स्थापित होकर सबको उन्नति का अवसर मिल सकता है। यदि लोग शराब आदि नशीले पदार्थों व मांसाहार जैसे तामसिक भोजन का परित्याग कर शुद्ध शाकाहार अपना लें, तो अपना देश फिर वैसा बन सकता है, जैसा 400 ई० में भारत यात्रा पर आए चीनी यात्री फाहियान ने लिखा है–"यहाँ (मथुरा) से दक्षिण मध्य देश कहलाता है। यहाँ शीत और उष्ण सम हैं। प्रजा प्रभूत और सुखी है। व्यवहार की लिखा-पढ़ी और पंच-पंचायत कुछ नहीं है। लोग राजा की भूमि जोतते हैं और उपज का अंश देते हैं। जहाँ चाहे जाएँ, जहाँ चाहे रहें। राजा न प्राणदण्ड देता है और न शारीरिक दण्ड देता है। अपराधी को अवस्थानुसार उत्तम साहस व मध्यम साहस का अर्थ दण्ड दिया जाता है। बार-बार दस्यु कर्म करने पर दक्षिण करच्छेद किया जाता है। राजा के प्रतिहार और सहचर वेतनभोगी हैं। सारे देश में कोई अधिवासी न जीव हिंसा करता है, न मद्य पीता है और न लहसुन-प्याज खाता है, सिवाय चाण्डाल के। दस्यु को चाण्डाल कहते हैं। वे नगर के बाहर रहते हैं और नगर में जब पैठते हैं तो सूचना के लिए लकड़ी बजाते चलते हैं कि लोग जान जाएं और बचाकर चलें, कहीं उनसे छू न जाएँ। जनपद में सूअर और मुर्गी नहीं पालते, न जीवित पशु बेचते हैं, न कहीं सूनागार और मद्य की दुकानें हैं। क्रय-विक्रय में कौड़ियों का व्यवहार है। केवल चाण्डाल मछली मारते, मृगया करते और मांस बेचते हैं।" (अनुवादक–जगन्मोहन वर्मा, पृ० 64)

निर्दोष जीवों के विरुद्ध किये जा रहे राक्षसी कर्म (आतंकवाद) से निवृत्त होने की प्रेरणा देते हुए पंडित सत्यपाल 'पथिक' जी ने लिखा है–

देख बन्दे तेरी है यही बन्दगी, तू किसी जीव को भी सताया न कर।
न किसी पर जरासी दया कर सके, तो जुल्म भी किसी पे ढाया न कर॥
इन पशु-पक्षियों को तू मारा न कर, मौत के घाट इनको उतारा न कर।
अपनी छः इंच लम्बी ज़बां के लिए, बेज़बानों पर छुरिया चलाया न कर॥
इन बेचारों ने तेरा बिगाड़ा है क्या, कोई घर-बार तेरा उजाड़ा है क्या?
तू घड़ी दो घड़ी की लहर के लिए, इन गरीबों के खूं से नहाया न कर॥
निरपराधों को तकलीफ देता है क्यों, जिन्दगी दे सके न तो लेता है क्यों?
जग में इनको भी जीने का अधिकार है, बेरहम इनका जीवन मिटाया न कर॥
जैसे बच्चे हैं सब लाडले आपके, यह भी वैसे ही प्यारे हैं माँ-बाप के।
छीन बच्चे किसी के 'पथिक' मारकर, अपने बच्चों को हरगिज खिलाया न कर॥

ऋषि दयानन्द के 140-वें निर्वाण पर्व पर—

भारत-भाग्य-विधाता—ऋषि दयानन्द

❑ मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001, मो० 9412985121

ऋषि दयानन्द जी का बलिदान 140 वर्ष पूर्व हुआ था। इस अवधि में उनके अनुयायियों एवं आर्यसमाज ने जो कार्य किये हैं, उसमें अनेक सफलतायें हैं। ऋषि दयानन्द को हम इसलिये भी स्मरण करते हैं कि उन्होंने हमें असत्य का परिचय कराकर सत्य ज्ञान, सत्य सिद्धान्त व मान्यताओं सहित जीवन को श्रेष्ठ व सफल बनाने वाले कर्तव्यों व अनुष्ठानों से परिचित कराया था। एक बार उनके समय के भारत की स्थिति पर विचार कर लेना उचित होगा। प्रथम बात यह है कि ऋषि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने से पूर्व देश घोर अविद्या व अन्धविश्वासों से ग्रस्त था। ईश्वर व जीवात्मा के सत्यस्वरूप से वह अपरिचित हो गया था। जब ईश्वर का सत्यस्वरूप ही लोगों को पता नहीं था तो सत्य उपासना भी वह नहीं जान सकते थे। देश भर में अविद्या पर आधारित मिथ्या परम्परायें प्रचलित थीं, जिनसे हमारा देश व समाज दिन-प्रतिदिन निर्बल व रुग्ण हो रहा था। महर्षि दयानन्द के समय में देश अंग्रेजों का गुलाम था। इससे पूर्व यह यवनों वा मुसलमानों का गुलाम रहा। सबने इसका शोषण किया और अमानवीय अत्याचार करने के साथ धर्मान्तरण किया। इस गुलामी का कारण भी अविद्या ही मुख्य था। इस गुलामी के कारण वैदिक धर्म व संस्कृति मिट रही थी और ईसाइयत का प्रचार व प्रसार हो रहा था।

इन विपरीत परिस्थितियों में देश, धर्म और संस्कृति की रक्षा करने का दायित्व ऋषि दयानन्द ने अपने ऊपर लिया और प्रथम उपाय के रूप में वेद, धर्म और संस्कृति का प्रचार आरम्भ किया। वह असत्य व मिथ्या मत एवं उनकी मान्यताओं का खण्डन करने सहित विद्या की बातों, सत्य सिद्धान्तों एवं वैदिक मान्यताओं का मण्डन करते थे। हरिद्वार के कुम्भ के मेले में भी उन्होंने पाखण्डों का खण्डन किया था और हरिद्वार में पाखण्ड खण्डिनी पताका भी फहराई थी। पौराणिक नगरी काशी में जाकर उन्होंने वहां भी पाखण्ड एवं मूर्तिपूजा आदि मिथ्या अवैदिक मान्यताओं का खण्डन किया था। इससे मिथ्या मतों के आचार्यों में खलबली मच गई थी परन्तु सभी मिथ्या मतों के आचार्यों में इतनी योग्यता नहीं थी कि वह सत्य को स्वीकार करें अथवा ऋषि दयानन्द की मान्यताओं को असत्य व वेद विरुद्ध सिद्ध करें।

इसका परिणाम सन् 16 नवम्बर, 1869 को मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ के रूप में सम्मुख आया। पौराणिक आचार्यों के रूप में लगभग 27 से अधिक काशी के शीर्ष आचार्यों ने अकेले स्वामी दयानन्द जी से शास्त्रार्थ किया। यह सभी आचार्य मूर्तिपूजा, अवतारवाद आदि के समर्थन में वेद का कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर सके। स्वामी दयानन्द जी का प्रचार जारी रहा। वह देश के अनेक राज्यों व उनके नगरों में जाकर वेदों का प्रचार करने लगे। सर्वत्र लोग उनके शिष्य बनने लगे। शिष्यों में अधिक संख्या पठित, शिक्षित व ज्ञानी लोगों की हुआ करती थी। सन् 1875 के अप्रैल महीने की 10 तारीख को लोगों के आग्रह पर स्वामी दयानन्द जी ने मुम्बई नगरी के गिरिगांव मुहल्ले में आर्यसमाज की स्थापना की। यह आर्यसमाज काकड़वाड़ी नाम से प्रसिद्ध है। आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य वेद और वेदानुकूल सिद्धान्तों एवं मान्यताओं सहित वैदिक जीवन शैली का प्रचार तथा पाखण्ड एवं अन्धविश्वासों सहित मिथ्या व अवैदिक सामाजिक परम्पराओं का उन्मूलन करना था।

स्वामी दयानन्द जी मनुष्यों के भोजन पर भी ध्यान देते थे। वह शुद्ध अन्न से बने भोजन को करने के ही समर्थक थे। मांसाहार, मदिरापान, अण्डे व मछली आदि का सेवन तथा धूम्रपान आदि को वह धर्म की दृष्टि से अनुचित तथा आत्मा को दूषित करने वाला मानते थे। देश को जातिवाद से मुक्त करने का भी स्वामी जी प्रयत्न किया। उन्होंने वैदिक काल में प्रचलित वैदिक वर्णव्यवस्था, जो गुण कर्म व

स्वभाव पर आधारित थी, उसके सत्यस्वरूप को देश व समाज के सामने रखा। देश के पतन का मुख्य कारण अज्ञान व अन्धविश्वास ही थे। स्वामी जी ने अज्ञानता व अशिक्षा दूर करने के लिए गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया और उस पर विस्तार से चिन्तन प्रस्तुत किया। इसी का परिणाम कालान्तर में गुरुकुल एवं दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज व स्कूलों की स्थापना के रूप में सामने आया। भारत के शिक्षा जगत में यह एक प्रकार की क्रान्ति थी। हमारे पौराणिक भाई नारी शिक्षा का विरोध करते थे। ऋषि दयानन्द ने नारी शिक्षा की वकालत की और बताया कि विवाह गुण, कर्म व स्वभाव की समानता से होता है वा होना चाहिये। अत: नारी का भी पुरुष के समान शिक्षित व विदुषी होना आवश्यक है। नारी यदि शिक्षित होगी तभी उसकी सन्तानें भी शिक्षित व संस्कारित हो सकेंगी। समाज ने ऋषि दयानन्द के इस विचार को अपनाया जिसका परिणाम हम आज देख रहे हैं कि शिक्षा जगत् में नारियों की उपलब्धियां पुरुष वर्ग से अधिक देखने को मिलती है। स्वामी दयानन्द जी ने समाज सुधार का जो कार्य किया वह एकांगी न होकर सर्वांगीण था। स्वामी दयानन्द नारी को संस्कारित कर वेद विदुषी बनाना चाहते थे। बहुत सी नारियां वेद विदुषी बनीं और आज भी गुरुकुलों का संचालन कर रही हैं। इसके विपरीत पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के प्रभाव में विवेक के अभाव में बहुत-सी नारियों ने भारतीयता की उपेक्षा कर पाश्चात्य नारी के स्वरूप को ग्रहण कर लिया जहां मनुष्य की भौतिक उन्नति तो कुछ-कुछ होती दिखाई देती है, परन्तु आध्यात्मिक उन्नति प्राय: शून्य ही होती है जिसका परिणाम जन्म-जन्मान्तरों में दु:ख के सिवा कुछ होता नहीं है। यह भी बता दें कि स्वामी दयानन्द जी और उनके अनुयायियों वा आर्यसमाज ने जन्मना जातिवाद को समाप्त करने के क्षेत्र सहित दलितोद्धार का भी महान् कार्य किया है।

अज्ञान व अन्धविश्वास सहित पाखण्डों का खण्डन करते हुए स्वामी दयानन्द जी ने मूर्तिपूजा, अवतारवाद, जन्मना जातिवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, अज्ञान व अविद्या के सभी कार्यों का खण्डन किया। स्वामी जी ने विद्या का प्रचार व प्रसार करने के लिये सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, ऋग्वेद-यजुर्वेद का संस्कृत-हिन्दी भाष्य, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया जिससे देश में अविद्या का प्रभाव व प्रसार कम होकर विद्या का प्रसार न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी हुआ। स्वामी दयानन्द जी ने अविद्या को दूर करने व सर्वत्र वैदिक मान्यताओं के अनुसार समाज व परिवार बनाने के लिये आर्यसमाज की स्थापनायें कीं। सर्वत्र साप्ताहिक सत्संग होने लगे जहां प्रात: यज्ञ-अग्निहोत्र, ईश्वरभक्ति के गीत व भजन तथा विद्वानों के ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप का प्रचार, समाजोत्थान व देशोत्थान की प्रेरणा, मिथ्या मान्यताओं का खण्डन एवं सत्य सिद्धान्तों का मण्डन व प्रचार होता था। ऋषि दयानन्द ने पूरे विश्व को सर्वोत्तम व श्रेष्ठतम उपासना पद्धति भी दी है या यह कह सकते हैं कि वैदिक काल में योग की रीति से जो उपासना की जाती थी, उसका उन्होंने पुनरुद्धार किया। सन्ध्या में किन मन्त्रों से व किस विधि से उपासना की जाये, इस पर न केवल चारों वेदों के चुने हुए मन्त्रों से संकलित उपासना की विधि बताई अपितु अपने सभी ग्रन्थों में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना पर व्यापक रूप से प्रकाश भी डाला।

आध्यात्म व सामाजिक जगत् के उन्नयन व उत्कर्ष का ऐसा कोई कार्य व उपाय नहीं था जिसका उल्लेख स्वामी दयानन्द जी ने न किया हो व जिसको प्रचलित करने के लिए उन्होंने व उनके अनुयायियों ने कार्य न किया हो। स्वामी दयानन्द जी ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने स्वराज्य प्राप्ति का उद्घोष अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में किया था। ऐसा अनुमान है कि सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के ग्यारहवें समुल्लास में अंग्रेजों का तीव्र शब्दों में विरोध ही उनकी मृत्यु के षड्यन्त्र का एक कारण बना था। इसकी विस्तार से चर्चा न कर हम पाठकों से अनुरोध करेंगे कि वह सत्यार्थप्रकाश का आठवां समुल्लास व ग्यारहवें समुल्लास सहित आर्याभिविनय, संस्कृत वाक्य प्रबोध एवं व्यवहारभानु आदि सभी ग्रन्थों को पढ़ें। हिन्दी को देश की व्यवहार व राजकाज की भाषा बनाने और गोवध बन्द करने के लिये भी ऋषि दयानन्द ने अंग्रेजों की गुलामी के दिनों में अग्रणीय

शेष पृष्ठ 16 पर....

संकट विश्वास का

❑ रामनिवास गुणग्राहक, मो० 07597894991

महर्षि दयानन्द की ऋतम्भरा पावन प्रज्ञा एवं पुण्य प्रतिभा को सादर नमन कि उन्होंने अपने मन्तव्यों को अपने विश्वास की कसौटी पर जांचा-परखा और उन्हें जीवन का अंग बनाया। संसार का सबसे भाग्यशाली पुरुष वह है जो सत्य सिद्धान्तों को निष्पक्षभाव से परखने का विवेक और सत्य सिद्ध होने पर उन्हें सर्वात्मना स्वीकारने का साहस रखता है। हमारा पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-समझना सब इसीलिए है कि हम अपने मन, मस्तिष्क और हृदय को सत्य के समझने और उसे स्वीकार करने योग्य बना सकें। पढ़-पढ़ाकर विद्वान् कहलाने के बाद भी सत्यासत्य का विवेक नहीं जागा और सत्य को स्वीकारने का साहस उत्पन्न न हुआ तो उस विद्वत्ता का मूल्य कौड़ियों में ही आंका जा सकता है। हम सत्य के लिए सर्वात्मना समर्पित रहने वाले ऋषि दयानन्द के अनुगामी कहलाते हैं, स्वयं को उनके सपनों का साकार करने वाले सैनिक भी कहते हैं। क्या हमने कभी अपनी शक्ति-सामर्थ्य और क्षमता को इस दृष्टि से परखने का प्रयास भी किया? प्रत्येक आर्य कभी एकान्त में बैठकर विचार करें कि क्या मैं ऋषि दयानन्द के सपनों को साकार करने की योग्यता रखता हूँ? ऋषिवर ने वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म घोषित किया है। क्या हम उस परमधर्म का पालन करते हैं? क्या हम अपने सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार कर सकते हैं? संसार का उपकार अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को मुख्य उद्देश्य मानने वाले आर्यों ने कभी अपने आर्यसमाज के सेवकों के संकट में पुरोहितों की पीड़ा को समझने, दूर करने के लिए कुछ किया? अपने सेवकों, दुकान-व्यापार के कर्मचारियों की पारिवारिक आवश्यकताओं को पूरा करने की मानवता दिखाई? क्या आर्य कहलाने वालों ने कभी स्वयं को सामाजिक सर्वहितकारी नियमों में परतन्त्र और हितकारी नियमों में स्वयं को स्वतन्त्र माना? महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार करने वाले उनके सैनिक आर्यों ने अपनी उन्नति से सन्तुष्ट न रहकर क्या सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझने वाला आर्यत्व दिखाया? कौन है जो इन सबके उत्तर हाँ में दे सके? इनमें से एक-दो के उत्तर हाँ में देने वाले आर्यों का मिलना दुर्लभ है। अब बताओ कि क्या हम दयानन्द के वीर सैनिक कहलाने और उनके सपनों को साकार करने की योग्यता रखते हैं?

आर्यो! जो तीसरे नियम में वर्णित आर्यों के परमधर्म का पालन नहीं करता वह अभागा अगले किसी नियम को पालन करने की योग्यता प्राप्त नहीं कर सकता। क्या इस वेद के स्वाध्याय-श्रवण का नियम निभाना सच में इतना कठिन है? नहीं, कुछ भी कठिन नहीं। केवल विश्वास का संकट है। सनातनधर्मी कहलाने वाले पौराणिकों को देखिए, पत्थर की प्रतिमा में परमेश्वर मानकर वे क्या-क्या नहीं करते? लाखों, करोड़ों रुपये लगाकर मन्दिर बनवाते हैं, लम्बी-लम्बी दुविधापूर्ण यात्राएँ करके दर्शन करने जाते हैं, वहाँ हजारों, लाखों का चढ़ावा चढ़ाते हैं। मथुरा, वृन्दावन व गोवर्धन आदि में चौरासी कोस की नंगे पांव परिक्रमा देते हैं। कुछ अन्धविश्वासी तो दण्डवत् लेट-लेटकर भी परिक्रमा करते हैं। ज्योतिष के नाम पर जो लूट का धन्धा चलता है, वह सब विश्वास के बल पर ही चलता है। आसाराम, रामरहीम और रामपालदास ने धर्म के नाम पर जितना भी अधर्म किया, उसके मूल में विश्वास ही तो था। हम आर्य कहलाने वाले उसे अन्धविश्वास कहकर कभी उसके विश्वास पक्ष से कुछ सीखने का प्रयास नहीं करते। माना कि वे अभागे अविद्या ग्रस्त हैं, जो असत्य को सत्य मानकर कष्ट उठाते और धन ठगाते रहते हैं। इस दृष्टि से हम कितने अभागे हैं जो सत्य पर भी विश्वास करने को तैयार नहीं होते। हम उनको इसलिए अच्छा नहीं मानते क्योंकि अन्धविश्वासों से ऊपर उठकर सत्य को स्वीकारने के लिए पौराणिकों को कहते हैं, क्या उन्हें हम स्वीकार करते हैं? क्या एक आर्य नित्य सन्ध्यादि पंच महायज्ञों का अनुष्ठान करता है? क्या सब आर्य वैचारिक और व्यावहारिक स्तर पर ईश्वर को सर्वव्यापक और न्यायकारी मानते हैं? आर्यजन और अधिकांश उपदेशक हृदय पर हाथ रखकर उत्तर दें कि क्या वे किसी शिक्षित व्यक्ति के धर्म व ईश्वर सम्बन्धी प्रश्नों के तर्क प्रमाण पूर्ण उत्तर दे सकते हैं? भारत में कुछ गिने-चुने नगर ही होंगे जिनमें किसी शिक्षित व्यक्ति की धर्म-ईश्वर सम्बन्धी शंकाओं का उत्तर देने में समर्थ विद्वान् हों।

हमें निष्पक्ष भाव से आत्मावलोकन करने की आवश्यकता है कि हम वेद के सत्य सिद्धान्तों पर भी विश्वास क्यों नहीं टिका पाते? जिन वैदिक सिद्धान्तों के लिए महर्षि दयानन्द ने अपना जीवन लगा दिया, जिन्हें जीवन में स्वीकार करके पथभ्रष्ट मुंशीराम पहले महात्मा मुंशीराम और बाद में स्वामी श्रद्धानन्द बनकर अपना जीवन धन्य कर जाते हैं। व्यावहारिक धरातल पर सत्य, सुखद, शान्तिप्रद और जीवन को सद्‌गुणों, सद्भावों से भर डालने वाले वेद के सिद्धान्तों-ईश्वरीय आदेशों पर विश्वास टिकाना हमारे लिए सम्भव क्यों नहीं हो पा रहा? लाख टके का प्रश्न यह भी है कि जिन वैदिक सिद्धान्तों पर विश्वास टिकाकर हम स्वयं उन्हें जीवन में धारण नहीं कर पा रहे, उन्हें दूसरे लोग क्यों स्वीकार कर सकेंगे? हमें यह दोहरा जीवन छोड़ना ही होगा। अथर्ववेद का स्तोता प्रभु से प्रार्थना कर रहा है-'**सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि**' (1.1.4) अर्थात हम श्रुति के (वेद के) पथ पर चलें उसके विरुद्ध न चलें। ऋग्वेद में भी स्पष्ट कहा है-'**मंत्र श्रुत्यं चरामसि**' (10.134.7) हम मंत्रों को सुनकर उन पर चलें, उनका अनुकरण करें, जिन्होंने वेदविद्या का पढ़ा, समझा, उस पर विश्वास करके आत्मसात् किया, उन ऋषि-मुनियों ने अपना जीवन तो धन्य किया ही, साथ ही विश्व को ऐसा मूल्यवान ज्ञान-विज्ञान दे गए कि उनके ग्रन्थों को पढ़कर भावी पीढ़ियों का जीवन भी धन्य हो गया। हम हैं कि उस जीवन धन्य करने वाले ज्ञान-विज्ञान को पाकर उसे केवल वाग्विलास का साधन मानते हैं। ऐसा नहीं है कि आर्यसमाज में वेदों को जीवन में धारण करने वाले विद्वान् व आर्यजन नहीं हैं। ऐसे भाग्यशाली आर्य पुरुष हैं, जिन्होंने अपने जीवन को तप, स्वाध्याय और संयम के सांचे में ढालकर वेदानुकूल बनाया है। ऐसे ही कुछ आर्यों के रहते आर्यसमाज थोड़ा-बहुत प्राणवान है। हमारा सादर नमन है उन सिद्धान्तवादी आर्यों से कि वे सिद्धान्तवादी होने से थोड़ा ऊपर उठकर सिद्धान्त जीवी बनने के लिए सच्चे हृदय से प्रयास करें, जो वैदिक सिद्धान्तों को जीवन का अंग नहीं बना सकते, वे लम्बे समय तक सिद्धान्तवादी भी नहीं रह पाते।

हमें वैदिक सिद्धान्तों पर विश्वास करना ही होगा। ऐसा विश्वास जिसे आचरण में उतारा जा सके। अभी तक हमारा वैदिक सिद्धान्तों पर जो विश्वास है, वह आकर्षण तक सीमित है। किसी कवि ने लिखा है-

पानी में पाषाण, भीजै पर छीजै नहीं।
मूरख आगे ज्ञान, रीझै पर बूझै नहीं॥

जैसे पानी में डालने पर पत्थर भीग तो जाता है, गलता नहीं ठीक वैसे ही ना समझ या कम बुद्धि वाले लोग ज्ञान की बातों को सुनकर आकर्षित तो होते हैं, मगर उनका मर्म नहीं समझ पाते। हम आर्य कहलाने वाले वेद और वैदिक धर्म के प्रति आकर्षित तो हैं। आकर्षण, लालसा और लगाव उत्पन्न करता है। हमें अपनी लालसा को लगाव तक पहुँचाना होगा।

एक समय था जब आर्यसमाज का सेवक भी विद्वानों वाले काम कर दिया करता था। सामान्य आर्य भी वैदिक सिद्धान्तों के लिए परिवार व समाज से भिड़ जाता था। आज वह गुण विद्वान् कहलाने वालों में भी नहीं दीखता। इस गिरावट का एकमात्र कारण है कि आर्यों के जीवन में स्वाध्याय और सन्ध्या का न होना। कोई भी आर्यसमाज से तभी जुड़ता है, जब वह वैदिक सिद्धान्तों से सुनकर या पढ़कर प्रेरित और प्रभावित होता है। आगे चलकर वह जितना अधिक सुनता और पढ़ता है, उतना ही अच्छा और समर्पित आर्य बनता है। जो सामान्य आर्य व विद्वान् थोड़ा-सा पढ़कर सब कुछ जानने समझने का भ्रम पाल लेते हैं, वे आधे अधूरे व अधकचरे आर्य बनकर रह जाते हैं और पदाधिकारी व उपदेशक बनकर वैसे ही कार्य करते हैं। वेद पर व्यवहार में परिणत होने वाला विश्वास केवल स्वाध्याय और सन्ध्योपासना के द्वारा ही उत्पन्न हो सकता है। महर्षि दयानन्द वेद के पढ़ने-पढ़ाने को धर्म ही नहीं, परमधर्म ठहराते हैं। हम ऋषि दयानन्द के अनुयायी कहलाकर उनके द्वारा घोषित परमधर्म का भी पालन नहीं कर पाते। इस परमधर्म का पालन किये बिना हम न तो सच्चे आर्य बन सकते हैं और न हमारा विश्वास वैदिक धर्म पर टिक पाएगा। जो स्वाध्याय करते हुए सन्ध्योपासना का अनुष्ठान श्रद्धा से करते रहते हैं, उनके लिए ऋषियों का सुखद आश्वासन है-'**स्वाध्याययोगसम्पत्त्यां परमात्मा प्रकाशते**' जिसके पास स्वाध्याय व योग की सम्पत्ति है, उनके हृदय में परमात्मा प्रकाशित होता है। अस्तु॥

(आर्य जगत् से साभार)

गऊओं को बचाओ—धर्म निभाओ

राम, कृष्ण अरु भोज थे, ईश्वर भक्त महान्।
देश-भक्त गऊ-भक्त थे, देव पुरुष गुणवान॥
देव पुरुष गुणवान, सदाचारी, बलधारी।
वीर विक्रमादित्य, भूप थे परोपकारी॥
सत्पुरुषों ने धर्म निभाया, की गऊ सेवा।
गऊ सेवा से उन्हें मिली थी, पावन मेवा॥ 1॥
जगद्गुरु दयानन्द थे, युगनायक श्रीमान्।
मान रहा है यह जगत्, उनको पुरुष महान्॥
उनको पुरुष महान्, सन्त-वैदिक प्रचारी।
सच्चे ईवर भक्त थे, निराले थे तपधारी॥
गऊ सेवा का पाठ, पढ़ाया था ऋषिवर ने।
गऊ गुणों की खान, बताया था ऋषिवर ने॥ 2॥
देव दयानन्द सा हुआ, ना कोई विद्वान्।
आर्यावर्त की सन्त ने, ऊँची की थी शान॥
ऊँची की थी शान, विश्व कर रहा बड़ाई।
ध्यान लगाकर सुनो, बात मेरी सुखदाई॥
रेवाड़ी है नगर, देश भारत का आला।
स्वामी जी ने खुलवाई, प्रथम गऊशाला॥ 3॥
युगनायक दयानन्द थे, किया बड़ा ऐलान।
अंग्रेजों को दो भगा, यदि चाहो कल्याण॥
यदि चाहो कल्याण, बनो योद्धा बलकारी।
गऊरक्षा में जुटो, राम से बन न्यायकारी॥
भारत वीरो! धर्म निभाओ, देश बचाओ।
बन्दा, नलवा बनो, जवानो! जोश दिखाओ॥ 4॥
गऊरक्षा जो कर रहे, हैं जालिम शैतान।
धर्म-कर्म का है नहीं, उन दुष्टों को ज्ञान॥
उन दुष्टों को ज्ञान नहीं है, वे हैं पापी।
भारत के हैं शत्रु, दुराचारी, सन्तापी॥
उन दुष्टों को पुण्य-पाप का भेद बताओ।
अगर न समझें दुष्ट, खलों के शीश उड़ाओ॥ 5॥
धन वालो! जागो सभी, बढ़-चढ़कर दो दान।
हरिश्चन्द्र, शिवि से बनो, दानी वीर महान्॥
दानी वीर महान् बनो, कर लो गऊ सेवा।
रखो मीत! विश्वास, मिलेगी सच्ची मेवा॥
जीवन होगा सफल, साथियो! यश पाओगे।
'नन्दलाल' तुम अमर, जगत् मे हो जाओगे॥ 5॥

–पं० नन्दलाल निर्भय पत्रकार, भजनोपदेशक, आर्यसदन बहीन, जनपद पलवल (हरयाणा) मो० 9813845774

पर्यावरण शुद्धि-यज्ञ यात्रा सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने के लिए हरयाणा प्रान्त के सभी जिलों में आर्यसमाजों व वेदप्रचार मण्डलों द्वारा पर्यावरण शुद्धि यज्ञ का आयोजन 10, 11, 12 नवम्बर 2023 को किया गया। इसी क्रम में दिनांक 11 नवम्बर 2023 को सुबह 11 बजे आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ रोहतक से पर्यावरण शुद्धि-यज्ञ यात्रा का शुंभारम्भ वेदप्रचार मण्डल रोहतक के प्रधान सुभाष सांगवान व कार्यालयाधीक्षक श्री सत्यवान आर्य ने इस यात्रा को ओ३म्-ध्वज दिखाकर रवाना किया, जिसमें दो वेदप्रचार रथ तथा दो ट्रैक्टर-ट्राली द्वारा हवन करते हुए आर्य-महिलाएँ एवं आर्यपुरुष पूरे शहर में गली-गली व चौराहों, सैक्टरों, कॉलोनियों में हवन यज्ञ यात्रा निकाली, जिसमें दयानन्दमठ से शुभारम्भ करते हुए सुखपुरा चौक, सैनी स्कूल रोड, प्रेमनगर चौक, जेल रोड, दुर्गा कॉलोनी, विकास नगर, सोनीपत रोड, मॉडल टाउन, सेक्टर-14, दिल्ली बाईपास, सेक्टर-1, सैक्टर-2, सैक्टर-3, सैक्टर-4, सैक्टर-4 एक्सटेंशन और सनसिटी सैक्टर-34 से होते हुए आजादगढ़ और कृपाल नगर होते हुए वापस दयानन्दमठ सभा कार्यालय में पहुंचे। रास्ते में अनेक स्थानों पर सैकड़ों श्रद्धालुओं ने हवन में आहुतियां डालीं। श्री हवासिंह राठी, तहसीलदार श्री रामकिशन बाल्याण, स्वामी नित्यानन्द, आचार्य सन्तराम आर्य, श्री धर्मराज दांगी, आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के भजनोपदेशक श्री सत्यपाल मधुर, श्री नरेन्द्र कुमार, श्री अंकुर आर्य, बहन दया आर्या, श्रीमती सत्यवती आर्या, श्रीमती मूर्ति देवी, श्रीमती सुशीला दलाल, श्रीमती सरोज आर्या, श्रीमती बालादेवी, श्रीमती कमलेश आर्या सहित अन्य अनेक गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

महर्षि दयानन्द का सन्देश... पृष्ठ 5 का शेष...

सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास के आरम्भ से चौदहवें समुल्लास पर्यन्त उनका तर्क कुठार उन सब पाखण्डों, अंधविश्वासों तथा मूढ़ विश्वासों को धराध्वस्त करता चलता है जो मानव के सहज, सरल तथा प्रशस्त जीवन पथ को पदे-पदे कण्टकाकीर्ण, विषम, भयावह तथा नरक तुल्य बनाने पर उतारू हैं।

स्वामी दयानन्द ने यह ध्यान रखा कि अवैज्ञानिक बातों तथा तर्क विरुद्ध माया जाल को गूंथने में उन पाखण्ड प्रिय लेखकों की भी महती भूमिका रही है जो हमारे महापुरुषों को अवतारों की श्रेणी में लाकर उनके सहज तथा स्वाभाविक जीवन के इर्द गिर्द चमत्कारपूर्ण कथानकों तथा अविश्वसनीय बातों के कुहक का सृजन करते रहे हैं। ऐसे ही अन्य देशीय मत-पंथों के लोगों ने नबियों, पैगम्बरों तथा कथित देवदूतों को लेकर असम्भव कल्पनाएं की हैं। अधिक दूर क्यों जायें-भारतीय नवजागरण के शिखर तुल्य परमहंस रामकृष्ण तथा स्वामी विवेकानन्द के क्रिया-कलापों को भी चमत्कारों तथा अविश्वसनीय कथाओं से ढक दिया गया है। (द्रष्टव्य- सत्येन्द्रनाथ मजूमदार लिखित विवेकानन्द चरित)

आश्चर्य तो यह है कि आज की नवशिक्षित तथा उच्चतर ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा प्राप्त पीढ़ी भी अंधविश्वासों के दुश्चक्र से स्वयं को उबार नहीं पाई है। तभी तो हम देखते हैं कि जुमेरात (गुरुवार) के दिन पढ़े लिखे डॉक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर तथा तकनीक कुशल वैज्ञानिक फकीरों से अपना भाग्य पूछते हैं, शताब्दियों पहले भूमिस्थ हुए औलियाओं और फकीरों से आशीर्वाद की याचना करते हैं। कैथोलिक रस्मोरिवाज में पली बढ़ी नेत्रियां चुनाव में सफलता की चाहना को लेकर कुम्भ के अवसर पर गंगा में गोता लगाती हैं। पुष्कर तीर्थ और गुजरात की अम्बा माता के मंदिर में सिर नवाती हैं, किसी फकीर की दरगाह में सिजदा करती हैं जिसके जीवन और इतिहास का उन्हें कोई अता-पता नहीं होता। ऐसे में स्वामी दयानन्द द्वारा उपदिष्ट बुद्धिवाद तथा विवेक का पाठ क्या सम्पूर्णतया प्रासंगिक नहीं है?

[स्रोत-ऋषि दयानंद का क्रांतिकारी चिंतन, पृष्ठ29-32, प्रकाशक-सरस्वती साहित्य संस्थान दिल्ली, प्रस्तुतकर्ता-भावेश मेरजा।

भारत-भाग्य-विधाता..... पृष्ठ 12 का शेष......

भूमिका निभाई थी। जिन दिनों ऋषि दयानन्द यह कार्य कर रहे थे तब गांधी जी बच्चे थे और अन्य बड़े राजनीतिक नेताओं का जन्म भी नहीं हुआ था। देश की आजादी के क्रान्तिकारी व अहिंसक आन्दोलनों में भाग लेने वालों में आर्यसमाज के अनुयायियों की संख्या सबसे अधिक थी। अंग्रेज भी इस तथ्य से परिचित थे और इसी कारण उन्होंने पटियाला के आर्यसमाज व अन्यत्र भी आर्यसमाज के सदस्यों के उत्पीड़न के कार्य किये। स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द, रामप्रसाद बिस्मिल आदि ऋषि दयानन्द के समर्पित अनुयायी थे। देश से स्त्री व पुरुषों की अशिक्षा को दूर कर शिक्षा का प्रचार व प्रसार करने में आर्यसमाज की अग्रणीय एवं प्रमुख भूमिका रही है। स्वधर्म एवं स्वसंस्कृति का बोध एवं प्रचार में भी आर्यसमाज का योगदान प्रमुख एवं सर्वाधिक है। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहां स्वामी दयानन्द ने अपना बौद्धिक योगदान न किया हो। स्वामी दयानन्द जी वस्तुत: विश्वगुरु थे। इसके साथ ही वह भारत के निर्माता और भाग्य विधाता भी सिद्ध होते हैं।

हम ऋषि दयानन्द की महान् पावन आत्मा को स्मरण करते हैं। उनकी सभी शिक्षायें आज भी प्रासंगिक नूतन हैं। उनके बताये मार्ग पर चल कर ही समाज व विश्व में शान्ति उत्पन्न हो सकती है। आज देश के सामने अनेक चुनौतियां हैं। इन चुनौतियों को परास्त करने के लिये सभी ऋषि-भक्तों को आलस्य का त्याग कर वेदप्रचार को जन-जन और घर-घर तक पहुंचाना होगा। सत्य के प्रचार में ईश्वर हमारा सहायक होगा और हमें सफलता अवश्य मिलेगी।

शोक-समाचार

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के भजनोपदेशक श्री सत्यपाल 'मधुर' के पिताजी श्री अमरसिंह जी का दिनांक 18.11.2023 को 89 वर्ष की अवस्था में निधन हो गया। उन्हें टाईफाईड बुखार था। स्वर्गीय श्री अमरसिंह जी बहुत धार्मिक विचारों के व्यक्ति थे। उनकी शान्तियज्ञ दिनांक 20.11.2023 को की गई। श्री सत्यपाल 'मधुर' जी उनकी पुण्य-स्मृति में 501/- सभा को दान दिये।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के अधिकारी एवं समस्त सदस्यगण परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शोकसन्तप्त परिवार को सुख और शान्ति प्रदान करने की प्रार्थना करती है। -सत्यवान आर्य, कार्यालयाधीक्षक

भिवानी में आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी मन्त्री श्री उमेद शर्मा जी पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने के लिए ओ३म्-ध्वज दिखाकर रथयात्रा का शुभारम्भ करवाते हुए तथा साथ में अन्य गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के यशस्वी मन्त्री श्री उमेद शर्मा जी आर्ष योग संस्थान फरीदाबाद में सभा को सम्बोधित करते हुए। साथ में स्वामी देवव्रत जी, ब्रह्मचारी ओमप्रकाश जी, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री धर्मपाल आर्य जी, आचार्य ऋषिपाल जी एवं अन्य सदस्यगण उपस्थित थे।

बिस्मिल

अस्फाक

200वीं

सदैव सत्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती | जयन्ती 1824-2024

रोशन सिंह

लाहड़ी

17 दिसम्बर, 2023 (रविवार)

प्रातः 10 बजे से दोपहर 2 बजे तक

के उपलक्ष्य एवं क्रान्तिकारियों की स्मृति में

नशा मुक्त हरियाणा अभियान

आर्य महासम्मेलन

संयोजक :
स्वामी नित्यानन्द सरस्वती
(महेन्द्र शास्त्री)
सम्पर्क सूत्र : 8053662657

कार्यक्रम स्थल : सूर्या गार्डन (माहरा) रोहतक रोड़, गोहाना (सोनीपत)

आयोजक : आर्य समाज तथा नशा बन्दी परिषद् हरियाणा

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

श्री ....

पत ....

....

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा